बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 12 अंक 84

उधार का पैसा

पिछले कुछ वर्षों में हमने कंपनियों और बैंकों को पेश आ रही दोहरे कर्ज की समस्या के बारे में सुना है। हमने क्रेडिट सुइस की 'हाउस ऑफ डेट' जैसी रिपोर्ट भी पढ़ी हैं जो उन कंपनियों के बारे में हैं जिनकी आय इतनी नहीं है कि वे अपने कर्ज का ब्याज भी भर सकें। इसके अलावा हमने बैंकों की तरफ से बड़े पैमाने पर बट्टे खाते में डाले जा रहे फंसे कर्जों के बारे में भी पढ़ा है। हालांकि ऐसा लगता है कि अब तक किसी ने निजी तौर पर उधार ली जा रही रकम की मात्रा और घरेलू कर्ज के बढ़ते स्तर पर गौर नहीं किया है। अर्थव्यवस्था के कई वर्षों की निवेश सुस्ती से गुजरने की स्थिति में उपभोग इंजन के पहले की तरह नहीं चलने की स्थिति में इस पर भी नजर डालने का वक्त आ गया है।

व्यक्तिगत या घरेलू वित्तीय तनाव की स्थिति आम तौर पर रोजगार या आजीविका गंवाने का नतीजा होती है और इस समय ऐसा ही कुछ है। कृषि आय में कमी, जेट एयरवेज का संकट या नोटबंदी के असर पर नजर डालिए। लेकिन अधिक गहरी समस्या पनपती नजर आ रही है जिसका ताल्लुक आर्थिक गिरावट या गतिरोधों से नहीं है। निजी कर्ज बढ़ता रहा है और हमें यह सवाल पूछना चाहिए कि कर्ज चुकाने का बोझ कहीं खर्च-योग्य आय पर असर तो नहीं डाल रहा है? खासकर उस समय जब घर खरीदने के लिए लिए गए कर्ज को निर्माणाधीन इमारत का काम रुक जाने पर भी लौटाना होता है। इन आंकड़ों पर एक नजर डालते हैं।

भारतीय रिजर्व बैंक की तरफ से अर्थव्यवस्था पर जारी पुस्तिका के मुताबिक वर्ष 2013-14 और 2017-18 के बीच बैंकों का आवंटित व्यक्तिगत कर्ज 89 फीसदी बढ़कर 19.1 लाख करोड़ रुपये हो गया। निजी उपभोग में 53 फीसदी की तेजी आने और समग्र गैर-खाद्य ऋण 39 फीसदी की और भी धीमी दर से बढ़ने के बावजूद ऐसा हुआ। इस दौरान घर खरीदने के लिए कर्ज लेने की दर में 82 फीसदी की उछाल आई जबकि टिकाऊ उपभोक्ता उत्पादों के लिए कर्ज 54 फीसदी और वाहन खरीदने के लिए कर्ज 78 फीसदी की दर से बढ़ा। 'अन्य व्यक्तिगत ऋण' श्रेणी में आई 154 फीसदी की तेजी और क्रेडिट कार्ड की देनदारियों में 176 फीसदी की जबरदस्त तेजी का आना और भी अनूठा था। औसत वृद्धि दर केवल शिक्षा ऋण (करीब 16 फीसदी) में ही देखी गई थी।

साप्ताहिक मंथन

टी. एन. नाइनन

उधारियों से संबंधित इन आंकड़ों को घरेलू बचत के आंकड़ों के बरक्स देखने की भी जरूरत है। वर्ष 2016-17 से पहले के तीन वर्षों में घरेलू बचत केवल 18 फीसदी ही बढ़ी जबकि भौतिक घरेलू बचत असल में मामूली तौर पर गिर ही गई। बचत के इन घरेलू आंकड़ों में असंगठित इकाइयां भी शामिल हैं लिहाजा ये आंकड़े सही तुलना करने लायक नहीं हैं। जो भी हो, उपभोग के लिए अधिक उधार लेने की प्रवृत्ति में तेजी साफ झलकती है। उधारी और समग्र उपभोग के बीच अनुपात चार वर्षों में 15.6 फीसदी से बढ़कर 19.3 फीसदी हो गया।

यह केवल बैंक कर्ज का हाल है। लोग गैर-बैंकिंग वित्त कंपनियों (एनबीएफसी) से भी कर्ज लेते हैं जिनमें आवासीय एवं वाहन कर्ज मुख्य हैं और उपभोक्ता उत्पादों एवं शादियों जैसे मौकों के कर्ज भी शामिल हैं। आरबीआई के आंकड़े बताते हैं कि बैंक केवल दो-तिहाई घरेलू वित्त ही मुहैया कराते हैं और घरों की समग्र वित्तीय जवाबदेही 2017-18 में 6.7 लाख करोड़ रुपये तक बढ़ गई। यह एक साल पहले देनदारियों में हुई वृद्धि से 80 फीसदी अधिक था।

सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के संबंध में भारत का घरेलू कर्ज महज 11 फीसदी ही है जो ब्रिक्स देशों की तुलना में काफी कम है। रूस में यह अनुपात 17 फीसदी, ब्राजील में 26 फीसदी और चीन में 48 फीसदी है। लेकिन कर्जों का भुगतान खर्च-योग्य आय से इतर होना चाहिए। ब्रिक्स देशों की तुलना में यह भारत में कम होगा जहां अधिकतर लोग अब भी किसी तरह जीवनयापन ही कर पाते हैं। ब्रिक्स देशों में प्रति व्यक्ति आय भारत की पांच गुनी है। उस वजह से व्यक्तिगत ऋण के स्तर पर इन देशों से सीधी तुलना करना भ्रामक हो सकता है। इसके अलावा अपनी मौजूदा विकास दर पर भारत में व्यक्तिगत कर्ज केवल 2-3 साल में ही बैंकों के कर्ज की सबसे बड़ी श्रेणी बन सकता है और भारी उद्योग एवं सेवा क्षेत्रों को पीछे छोड़ देगा। मसलन, समूचे उद्योग जगत का बैंक कर्ज वर्ष 2017-18 के पहले के चार वर्षों में केवल 7.3 फीसदी ही बढ़ा। अगर आय बढ़ती रहती है तो घरेलू खर्चों को वित्त मुहैया कराना अच्छा है। लेकिन अगर ऐसा नहीं होता है तो कर्ज का बढ़ा स्तर मुश्किलें बढाएगा और हम पर दोहरी मार पड़ेगी।

बिनय सिन्हा

नई सरकार की सबसे बड़ी आर्थिक चुनौती

बैंकिंग क्षेत्र की मौजूदा समस्या के केंद्र में तरलता संकट से अधिक बैंकों की जोखिम-विमुखता है। भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए इस समस्या की गंभीरता पर रोशनी डाल रहे हैं तमाल बंद्योपाध्याय

एक वरिष्ठ बैंकर ने हाल ही में कहा कि परंपरागत तौर पर मुख्य क्षेत्र वित्तीय क्षेत्र की सेहत प्रभावित करता है लेकिन अब दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती बड़ी अर्थव्यवस्था में वित्तीय क्षेत्र की चिंताएं मुख्य क्षेत्र पर भारी पड़ती दिख रही हैं। उनकी इस बात से मेरी चाची सहमत नजर आती हैं। 'कैसेंड्रा' पुकारे जाने का जोखिम होते हुए भी वह कहती हैं कि अगर नई सरकार और भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) इस दिशा में युद्ध स्तर पर प्रयास नहीं करते हैं तो हालात काफी खराब हो जाएंगे।

क्या सरकार और बैंकिंग नियामक का रुख नकारात्मक रहा है? ऐसा नहीं है लेकिन उन्हें जल्द कदम उठाने की जरूरत है। इसकी वजह जानने के लिए भारतीय वित्तीय क्षेत्र में घट रही घटनाओं पर एक फौरी नजर डालते हैं।

गैर-बैंकिंग वित्त कंपनी (एनबीएफसी) उद्योग बैंकों से कहीं अधिक तेजी से बढ़ता रहा है लेकिन आज यह बेहाल है क्योंकि परिसंपत्ति एवं जवाबदेही के बीच तालमेल नहीं है। कुछ लोगों का कहना है कि मुद्दा परिसंपत्ति गुणवत्ता का है। गत पांच वर्षों में एनबीएफसी की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर 17 फीसदी रही है जबकि बैंकिंग क्षेत्र की दर 9.4 फीसदी रही है। आवासीय वित्त कंपनियां 20 फीसदी की दर से बढ़ती रही हैं। पिछले साल के मध्य तक एनबीएफसी का कुल ऋण बाजार करीब 28.5 लाख करोड़ रुपये था जो बैंकिंग परिसंपत्तियों का तिहाई हिस्सा है। लेकिन अब यह कम होने लगा है। बैंक ऋण करीब 12.3 फीसदी की दर से बढ़ता रहा है जो पिछले दो वर्षों के 8.4 फीसदी से काफी अधिक है लेकिन इससे भी सही तस्वीर नहीं सामने आती है। पिछले कुछ वर्षों में ऋण स्थानापन्न के तौर पर एनबीएफसी ने कर्ज बांटे। बैंकों की अपेक्षाकृत उच्च ऋण वृद्धि भी इसकी भरपाई करने में नाकाम रही है। बैंक ऋण के घटकों पर बारीक निगाह डालने पर सब कुछ पता चल जाता है। बड़े उद्योगों को कर्ज 8.2 फीसदी की दर से बढ़ रहा है, सूक्ष्म एवं लघु इकाइयों को कर्ज 0.7 फीसदी और मझोली इकाइयों को कर्ज 2.6 फीसदी की दर से बढ़ा है। सवाल है कि बाकी पैसा कहां जा रहा है? बैंकिंग क्षेत्र का व्यक्तिगत कर्ज आवंटन करीब 18 फीसदी और आवासीय ऋण 19 फीसदी की दर से बढ़ रहा है।

करीब 23 लाख करोड़ रुपये के आकार वाले म्युचुअल फंड उद्योग को डेट म्युचुअल फंड के नाते पसीने छूट रहे हैं। दरअसल डेट फंडों में अपने शेयरों को गिरवी रखने वाले कई भारतीय प्रवर्तकों का भी जुड़ाव है। इन गिरवी शेयरों की कीमतें गिर गई हैं जिससे फंड हाउस और खुद प्रवर्तक भी शेयरों को खुले बाजार में बेचने के लिए मजबूर हो गए हैं। कई एनबीएफसी की भी हालत कुछ ऐसी ही है।

बंबई स्टॉक एक्सचेंज (बीएसई) के आंकड़े बताते हैं कि प्रवर्तकों के गिरवी रखे शेयरों का मूल्य अप्रैल के अंतिम हफ्ते में 2.25 लाख करोड़ रुपये था। बीएसई में सूचीबद्ध कुल 5,126 में से 2,932 कंपनियों के आधे से अधिक प्रवर्तकों ने इसी तरीके से पैसे जुटाए हैं। कई प्रवर्तकों के अपना स्वामित्व आधार कम करने की कोशिशों के चलते एशिया की तीसरी बड़ी अर्थव्यवस्था में पूंजीवाद को नए सिरे से परिभाषित किया जा रहा है।

इन्फ्रास्ट्रक्चर लीजिंग ऐंड फाइनैंशियल सर्विसेज (आईएलऐंडएफएस) की नाकामी के बाद अधिकांश रेटिंग एजेंसियां या तो कवर के लिए भाग रही हैं या आक्रामक तरीके से कंपनियों की रेटिंग कम कर रही हैं। ऐसी सात एजेंसियां हैं। क्या उन सबको यह पता है कि जोखिम का आकलन कैसे किया जाता है? निश्चित रूप से, वे बैलेंस शीट के मायने समझने और लाभ एवं हानि के आंकड़े समझने में सक्षम हैं लेकिन उनमें बाजार संबंधी समझ की कमी है। इसीलिए वे चौंकाने वाली हरेक घटना के बाद हमेशा अपने दरवाजे बंद कर लेते हैं। मीडिया रिपोर्ट की मानें तो रेटिंग एजेंसियों ने प्रवर्तक शेयरों के समर्थन वाले करीब 40,000 करोड़ रुपये मूल्य के डिबेंचरों की रेटिंग की है और डिबेंचर को डेट म्युचुअल फंड एवं एनबीएफसी के खातों में भी जगह मिल गई है।

रिकॉर्ड के लिए, रेटिंग एजेंसियों ने आईएलऐंडएफएस प्रकरण के बाद पिछले दशक की तुलना में अधिक कंपनियों को निगरानी सूची में रखा है। वर्ष 2018-19 में 10 लाख करोड़ रुपये मूल्य के कॉर्पोरेट बॉन्ड को रेटिंग निगरानी में रखा गया था जो कुल कॉर्पोरेट कर्ज का करीब 10 फीसदी था। वर्ष 2017-18 में यह आंकड़ा 2 लाख करोड़ रुपये का था।

अगर अधिकारियों को त्वरित कार्रवाई के लिए बाध्य करने के वास्ते इतना काफी नहीं है तो कथित तरलता संकट का मुद्दा भी है। क्या तरलता संकट की स्थिति गंभीर है? कई लोग ऐसा ही मानते हैं। उनका कहना है कि तरलता संकट समूची कर्ज प्रणाली को अवरुद्ध कर देगा और 2 लाख करोड़ डॉलर वाली भारतीय अर्थव्यवस्था ठहर जाएगी। हालात की गंभीरता और इसके संभावित नतीजों से सहमत होते हुए भी मुझे लगता है कि तरलता संकट की धारणा अतिरंजित है। इस समस्या की जड़ में तरलता की कमी नहीं बल्कि बैंकों का जोखिम उठाने से बचना है।

इस महीने की शुरुआत में 1.3 लाख करोड़ रुपये रहा दैनिक प्रणालीगत तरलता घाटा करीब 30,000 करोड़ रुपये पर आ चुका है। आरबीआई दो बार में 10 अरब डॉलर के विनिमय के जरिये करीब 70,000 करोड़ रुपये जुटाकर इस मुद्दे को लगातार सुलझाने की कोशिश करता रहा है। आरबीआई ने मई में 25,000 करोड़ रुपये मूल्य के बॉन्ड बेचे और अप्रैल में तरलता बढ़ाने के लिए बैंकों का तथाकथित तरलता कवरेज अनुपात बदला गया। लेकिन बैंक कर्ज देने को तैयार नहीं हैं क्योंकि उनकी राय में कई एनबीएफसी बैठ सकती हैं और वे अपना पैसा भी वापस नहीं पा सकेंगी। पिछले महीनों में दो बार ब्याज दरें कम करने के बावजूद अधिकांश एनबीएफसी ने अपनी कर्ज दरों में कटौती भी नहीं की है। सच तो यह है कि उन्होंने कर्ज की दरें बढ़ा दी हैं। जब मेरी चाची इसे भारत का लीमन क्षण बताती हैं तो मैं उनसे सहमत नहीं हो पाता लेकिन इन मुद्दों का समाधान नहीं करने पर हम उसी दिशा में बढ़ सकते हैं।

क्या कदम उठाए जाने चाहिए? एनबीएफसी, म्युचुअल फंड और रेटिंग एजेंसियों के कई हिस्से अपनी विश्वसनीयता गंवा चुके हैं। कुछ बैंकों की सेहत बहुत अच्छी नहीं है और बैंकिंग प्रणाली ने ऋण की कमी से जूझ रही कंपनियों से अपना मुंह मोड़ लिया है। वे केवल घर खरीदने एवं व्यक्तिगत ऋण के लिए ही धन दे रहे हैं। बुनियादी तौर पर वे भारत की वृद्धि का लाभ उठा रहे हैं। अब तक असंगठित क्षेत्र में रोजगारहीनता और नौकरियों की कटौती पर चर्चा होती रही है लेकिन संगठित क्षेत्र में भी नौकरियां कम होने पर बैंकों को खुदरा कर्जदारों की चूक का भी सामना करना होगा। यह ऊंट की पीठ पर रखा आखिरी तिनका साबित होगा।

लीमन संकट की चपेट में आने से पहले हमें कदम उठाने की जरूरत है। सरकार और आरबीआई को निर्णायक कदम उठाते हुए व्यवस्थागत पतन से बचाने के लिए काम करने होंगे। कुछ एनबीएफसी को कामकाज समेटने होंगे, कुछ बेहतरीन ट्रैक रिकॉर्ड वाली कंपनियों को बैंक के रूप में तब्दील कर आरबीआई की निगरानी में लाया जा सकता है। हमें मात्रात्मक सुगमता (क्यूई) और संकटग्रस्त परिसंपत्ति राहत कार्यक्रम (टीएआरएफ) की भी जरूरत है।

आरबीआई संकटग्रस्त एनबीएफसी और बैंकों पर कड़ी नजर रखते हुए उन्हें अपनी परिसंपत्तियों को हटाने के लिए बाध्य कर सकता है ताकि उनका समुचित बाजार मूल्य मिले और सरकार उनमें रकम डाल सके। अगर ढांचा सही है तो सरकार टीएआरएफ की हालत सुधरने के बाद उससे खासा लाभांश बटोर सकती है।

(लेखक बिज़नेस स्टैंडर्ड के सलाहकार संपादक एवं जन स्मॉल फाइनैंस बैंक के वरिष्ठ परामर्शदाता हैं।)

'खान मार्केट गैंग' की मुश्किलें और मोदी की नाखुशी

जिंदगीनामा

कनिका दत्ता

पिछले दिनों प्रधानमंत्री ने देश की राजधानी में स्थित एक खास जगह जाने वाले लोगों के 'गैंग' से खुद को अलग करने की कोशिश की। आखिर इस गैंग के बारे में कौन सी बात प्रधानमंत्री को इतना असहज कर देती है कि एकसमान सोच रखने वाले इस समूह को अपने खिलाफ मानने लगते हैं? 'द इंडियन एक्सप्रेस' में प्रकाशित साक्षात्कार से पता चलता है कि वह खान मार्केट के सभी निवासियों को समृद्ध, उदार, पश्चिमी शैली में ढले अभिजन मानते हैं जो उनका और उनकी शैली की राजनीति का तिरस्कार करते हैं।

दुनिया के सबसे महंगे 25 स्थानों में शामिल खान मार्केट में लोग महंगे ब्रांड के उत्पाद खरीदने या महंगे रेस्टोरेंट में खाने-पीने जाते हैं। ऐसे में यह कहना लाजिमी है कि उन लोगों का ध्यान राजनीति पर सबसे कम ही होता है। खान मार्केट में खानपान की कोई भी ऐसी जगह नहीं है जो कॉलेज स्ट्रीट के मशहूर कॉफी हाउस या लेफ्ट बैंक कैफे से मिलता-जुलता हो। एक समय था जब इन जगहों पर बौद्धिक एवं सत्ता-विरोधी विमर्श लगभग अनिवार्य होता था। अगर प्रधानमंत्री ने यह निष्कर्ष निकाला है कि खान मार्केट के ग्राहकों की वजह से वे नहीं बने हैं और उनका मत मिलने की उन्हें संभावना भी नहीं है। ऐसे में हमें यह मान लेना चाहिए कि मोदी या उनके पार्टी सहयोगियों ने यह राय बनाने के लिए बाकायदा इस जगह का सर्वे किया होगा।

इसके बावजूद मोदी का इस बाजार को अपने वोटबैंक में एक ब्लैंक चेक के रूप में रखना तरस की बात है। अगर उन्होंने अपने गृह-राज्य गुजरात की तरह खान मार्केट के लिए भी अपना उत्साही रवैया दिखाया होता तो उन्हें निस्संदेह इन तथाकथित उदार कुलीनों से भी कुछ तगड़ा समर्थन मिला होता।

विभाजन के बाद पश्चिमोत्तर सीमांत प्रांत से आए शरणार्थियों की बस्ती रहे इस बाजार ने खरीदारी के लिए देश के सबसे महंगे एवं फैशनपरस्त जगह के रूप में कनॉट प्लेस को पीछे छोड़ दिया है। इसे 21वीं सदी में यह पहचान मिलना भी एक विडंबना ही है क्योंकि इसे 'सीमांत गांधी' खान अब्दुल गफ्फार खां के सीधे-सादे भाई खान अब्दुल जब्बार खां के नाम पर खान बाजार नाम मिला था।

खान मार्केट को यह दोहरी प्रतिष्ठा हासिल करने के लिए कीमत भी चुकानी पड़ी है। अच्छी जगह पर मौजूद होने के साथ ही यह बाजार उदारीकरण के बाद शहरी अभिजात्य वर्ग की मांग पूरी करने का जरिया भी बना। शोरगुल से परेशान होकर और आसमान छूते किराये के लालच में आकर यहां के निवासियों ने अपने घरों को दुकानों एवं रेस्टोरेंट को किराये पर दे दिया। इससे नए एवं रोमांचक स्थान देखने को मिले लेकिन उसी के साथ कुछ नकारात्मक बातें भी हुई हैं।

आज खान मार्केट जाने वाला कोई भी व्यक्ति ट्रैफिक जाम में फंस जाएगा। इसकी वजह यह है कि कारें दुकानों-रेस्टोरेंट तक सवारियों को उतारने के लिए पहुंचती हैं। इस बाजार का प्रबंधन संभालने वाले संगठन ने पार्किंग की समस्या दूर करने के लिए पेड सर्विस के साथ मुफ्त पार्किंग शुरू कर दी लेकिन इससे खान मार्केट गैंग के सदस्यों के हतोत्साहित होने की संभावना कम ही है।

खान मार्केट में आग लगने का खतरा भी अधिक गंभीर समस्या बन गया है। लकड़ी की संकरी सीढ़ियों और चौड़ी खिड़कियों से बनी अधिकांश इमारतें अब सजे-धजे रेस्टोरेंट में तब्दील हो चुकी हैं। आग लगने की स्थिति में बचाव एवं राहत के उपाय कुछ रेस्टोरेंट में ही नजर आते हैं। लुटियंस दिल्ली (मोदी को चिढ़ पैदा करने वाली एक और जगह) के अधिकांश इलाके की ही तरह खान मार्केट भी नई दिल्ली नगरपालिका परिषद (एनडीएमसी) के अधिकार क्षेत्र में आता है। एनडीएमसी की प्रशासनिक परिषद में केंद्र सरकार के प्रतिनिधियों का ही बहुमत होता है। यह निकाय अग्नि सुरक्षा मानकों को लागू करने में ढिलाई बरतता रहा है। उच्चतम न्यायालय ने तीखी टिप्पणी भी की थी कि समृद्ध लोगों को कानून प्रवर्तन से छूट दी जा रही है।

इन सबका मोदी से क्या लेना-देना है? सीधी सी बात है। यह बाजार प्रधानमंत्री निवास से महज 3.5 किलोमीटर दूर है। वह अपनी राजनीतिक प्राथमिकताओं के हिसाब से यहां की सड़कों के नाम बदलने में उत्साही रहे हैं। लेकिन इस बाजार की बुनियादी ट्रैफिक समस्या और सुरक्षा चिंताओं को दूर करने के लिए एनडीएमसी को निर्देश देना मोदी के प्रत्यक्ष अधिकार में है। अगर यहां की दुकान या रेस्टोरेंट में आग लगती है तो वहां धनी लोगों के साथ आम कामगार भी चपेट में आएंगे।

मोदी अगर अपने अच्छे दोस्त शी चिनफिंग से मिलने अगली बार चीन जाएं तो उन्हें शिनथ्यांदी भी जाना चाहिए। खरीदारी एवं मनोरंजन के ठिकानों से भरपूर इस जगह को शांघाई का खान मार्केट कहा जा सकता है। शिनथ्यांदी में भी कुछ सबसे महंगी रियल एस्टेट प्रॉपर्टी और फैशनेबल प्रतिष्ठान हैं। लेकिन यह समानता यहीं पर खत्म हो जाती है। इस संकरे गलियारे में दुकानों एवं रेस्टोरेंट की भरमार है लेकिन सरकार ने शहरी नवीनीकरण योजना चलाकर यहां के कुछ पुराने घरों का जीर्णोद्धार भी करवाया है। लेकिन खान मार्केट के उलट शिनथ्यांदी में रहने वाले परिवारों को सरकार ने दूसरी जगह जाने के लिए मजबूर किया था। यह एक कार-मुक्त जगह है जहां घूमते समय लोगों को हॉर्न सुनकर डरना नहीं पड़ता है।

संक्षेप में, शिनथ्यांदी एक शांत एवं समृद्ध इलाका है जो माओत्से तुंग के बाद लागू 'चीनी शैली के पूंजीवाद' की खूबियों को बयां करता है। खान मार्केट को शिनथ्यांदी बनाने के लिए बहुत कुछ नहीं करना है, बस थोड़ी काल्पनिकता के साथ शहरी नियोजन करने की जरूरत है। निश्चित रूप से, इनमें से कुछ भी ऐसे प्रधानमंत्री की क्षमताओं से बाहर नहीं है जिसने वाराणसी को स्वच्छ बनाने के लिए सदियों पुरानी तंद्रा को सिर्फ पांच वर्षों में ही तोड़ दिया है। अगर वह खान मार्केट में अपना बदलावकारी जादू दिखाने का फैसला करते हैं तो उन्हें खान मार्केट गैंग से अधिक अजनबीपन भी नहीं महसूस होगा।

कानाफूसी

फर्जी कंपनियों पर नकेल

कॉर्पोरेट मामलों के मंत्रालय (एमसीए) ने कॉर्पोरेट बोर्ड के लिए काम थोड़ा और मुश्किल बना दिया है। मंत्रालय ने यह अनिवार्य किया है कि प्रत्येक कॉर्पोरेट निदेशक को कंपनी का नाम और पता लिखे हुए साइन बोर्ड के साथ फोटो खिंचाना होगा। यह बोर्ड कंपनी मुख्यालय की इमारत की बाहरी दीवार पर होगा। ये सभी फोटो मंत्रालय की वेबसाइट पर अपलोड किए जाएंगे। अगर किसी कंपनी की एक से अधिक सहायक कंपनियां हैं तो उन्हें प्रत्येक सहायक कंपनी के लिए अलग फोटो खिंचानी होगी। मंत्रालय के अधिकारियों का कहना है कि इसका मकसद शेल कंपनियों को रोकना है। कई बार देखा गया है कि कई सौ कंपनियां एक ही कमरे से संचालित की जाती हैं।

बंबई स्टॉक एक्सचेंज में जश्न

बंबई स्टॉक एक्सचेंज ने गुरुवार को सेंसेक्स के 40,000 का आंकड़ा पार करने की खुशी में केक काटने की घोषणा की। चुनाव परिणामों की घोषणा वाले दिन शुरुआती रुझानों में ही प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की स्पष्ट जीत के संकेत से सेंसेक्स 40,000 को पार कर गया था। हालांकि बाद में मुनाफावसूली के चलते शेयर बाजार 39,000 से नीचे बंद हुआ। आमतौर पर सेंसेक्स द्वारा नए रिकॉर्ड बनाने पर एक्सचेंज में जश्न मनाया जाता है, लेकिन इसमें शेयर बाजार के बंद होने के आंकड़े को भी ध्यान में रखा जाता है। हालांकि दिन के आखिर में सेंसेक्स में हुई गिरावट भी केक काटने वाले समारोह को नहीं रोक पाई और लगता है कि यह जश्न सेंसेक्स के साथ साथ प्रधानमंत्री मोदी की जीत का भी जश्न था क्योंकि बहुत से लोग 'नमो अगेन' लिखी हुई टी-शर्ट पहन कर आए थे।

आपका पक्ष

जल संकट की बढ़ती समस्या

जल ही जीवन है, यह बात हम सभी बचपन से सुनते आ रहे हैं लेकिन शायद हमने इसे सिर्फ सुना है पर कभी इसे समझा नहीं है। आज देश में 60 करोड़ से अधिक लोग जल संकट का सामना कर रहे हैं। हमारे सामने आने वाली दीर्घकालिक चुनौतियों में से एक है पानी की कमी है। कुछ रिपोर्ट के अनुसार 75 प्रतिशत घरों में आज भी पीने का पानी तक नहीं है। घरों में पानी की पहुंच तो एक समस्या है ही इसके अलावा पानी की गुणवत्ता भी बेहद खराब है। इन चुनावों में हमने सब कुछ देखा है लेकिन हमने जो नहीं देखा वह है वास्तविक मुद्दों पर चर्चा। इस तरह के महत्त्वपूर्ण मुद्दों के बारे में चुनावों में बहुत कम बात की जाती है। सरकार को ऐसे मुद्दों पर ध्यान देना चाहिए जो हमारे जीवन

को बेहद प्रभावित करते हैं। भारत को इजरायल जैसे देशों से सीखने की आवश्यकता है जो एक बंजर जमीन को भी उपजाऊ बना सकते हैं। यह जॉर्डन के लिए सरप्लस जल का निर्यात भी करता है। हालांकि पानी को सरकारी नीतियों के केंद्र में नहीं रखा जाता है। पानी के तर्कसंगत उपयोग को सदैव हतोत्साहित किया जाता रहा है। सरकार को कृषि और बिजली नीतियों को फिर से तैयार करना चाहिए। हमें पानी के दोबारा इस्तेमाल को बढ़ावा देने के लिए तकनीक का इस्तेमाल करना चाहिए। भारत में पानी रीसाइकिल तो होता है लेकिन यह आवश्यक स्तर के करीब नहीं है। हमें इस पर भी काम करने की जरूरत है। आज भारत को राजनीतिक अभियानों में पानी को शामिल करने की जरूरत है। यह राजनीतिक दलों पर पानी के बेहतर उपयोग के लिए नीतियों को नया स्वरूप देने का दबाव डालेगा। सरकार के साथ-साथ हम सभी को पानी को बचाने का संकल्प लेना चाहिए। हमें पानी के व्यर्थ उपयोग से बचना चाहिए।

देश में जलसंकट से निजात के लिए लोगों को भी पानी बचाने पर जोर देना होगा

मनीषा महलावत, गुरुग्राम

मंदी से बचने के हों उचित उपाय

भारत मंदी से बचने के लिए पूरी तरह से तैयार है क्योंकि यहां काला धन, मुद्रास्फीति कम करने के लिए सख्त प्रावधान बनाए जा रहे हैं। सरकार के ऐसे कदमों से मंदी का असर नहीं पड़ने की संभावना है। वर्ष 1928 की मंदी के बाद अमेरिका दुनिया का महाशक्ति देश बना। इस कारण मंदी से बच कर भारतीय अर्थव्यवस्था मजबूत होती जा रही है। अगर भारत मंदी से पूरी तरह बच जाता है तो यहां की गरीबी दूर होगी और लोगों को अधिक पैसे मिलेंगे। देश में काला धन खत्म करने के लिए कड़े कानून बनाने तथा इसे कड़ाई से लागू करने की जरूरत है। काले धन के सफाये से देश की अर्थव्यवस्था में मजबूती आएगी।

राकेश जैन, सतना

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिजनेस स्टैंडर्ड लिमिटेड, 4, बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली - 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in उस जगह का उल्लेख अवश्य करें, जहां से आप ईमेल कर रहे हैं।